कुवेंपु के अनूदित उपन्यासों में सांस्कृतिक समतुल्यता

राजशेखर उमेश जाधव

अध्यक्ष, हिंदी विभाग, विश्व भारती प्रथम दर्जा महाविद्यालय, तुरुनूर, तहसील: रामदुर्ग, जिला: बेलगावी.

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.18330749

ABSTRACT:

प्रस्तुत शोध पत्र कन्नड़ साहित्यकार कुवेंपु के हिंदी अनूदित उपन्यासों में 'सांस्कृतिक समतुल्यता' की अवधारणा का विश्लेषण करता है। यह अध्ययन दर्शाता है कि कैसे अनुवादक ने शाब्दिक अनुवाद से परे जाकर मूल पाठ के सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश को सुरक्षित रखा है। 'हब्बे' के लिए 'गोदना' और 'तुलसीकट्टे' के लिए 'वृंदावन' जैसे उदाहरणों के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि सांस्कृतिक प्रतिस्थापन हिंदी पाठकों के लिए ग्रामीण कर्नाटक के धार्मिक और लोक संदर्भों को जीवंत बनाए रखता है। निष्कर्षतः, ये अनुवाद भाषाई सीमाओं को पाटते हुए भारतीय साहित्य को समृद्ध करते हैं और लक्ष्य भाषा में मूल भावों को प्रभावी ढंग से संप्रेषित करते हैं।

KEYWORDS:

कुवेंपु, सांस्कृतिक समतुल्यता, हिंदी अनुवाद, कन्नड़ उपन्यास, भारतीय साहित्य।

प्रस्तावना:

कुवेंपु (कुप्पल्ली वेंकटप्पा पुट्टप्पा : 1904–1994) कन्नड़ साहित्य के युगप्रवर्तक रचनाकार और आधुनिक भारतीय साहित्य के प्रमुख स्तंभ माने जाते हैं। वे कवि, उपन्यासकार, नाटककार, आलोचक और विचारक के रूप में समान रूप से प्रतिष्ठित रहे हैं। कन्नड़ साहित्य की शायद ही कोई ऐसी विधा हो जिसमें कुवेंपु ने सृजन न किया हो। उनके साहित्य में मानवतावाद, प्रकृति-चेतना, दार्शनिक दृष्टि और सांस्कृतिक बोध का सशक्त समन्वय दिखाई देता है।

कुवेंपु ने मैसूर विश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा प्राप्त की और वहीं अध्यापक के रूप में नियुक्त होकर आगे चलकर उसी विश्वविद्यालय के कुलपति बने। यह उनके विद्वत् व्यक्तित्व और शैक्षिक योगदान का प्रमाण है। साहित्य के साथ-साथ उन्होंने शिक्षा और सांस्कृतिक चिंतन के क्षेत्र में

भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

कुवेंपु की प्रमुख रचनाएँ:

कुवेंपु की रचनाएँ कन्नड़ समाज की सांस्कृतिक चेतना, लोकजीवन और आध्यात्मिक मूल्यों को सशक्त रूप में अभिव्यक्त करती हैं। उनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं—

- काव्य एवं काव्य-संग्रह: श्री रामायणदर्शनम् (महाकाव्य), चित्रांगदा (खंडकाव्य), कोललु, नविलु, कोगिले मत्तु सोवियत रश्या, पांचजन्य, जेनागुव, कृत्तिके, अनिकेतन, इक्षु गंगोत्री।
- उपन्यास: कानूरु सुब्बम्मा हेग्गडति, मलेगलल्लि मदुमगलु।
- कथा-संग्रह: सन्यासी मत्तु इतर कथेगलु, नन्न देवरु मत्तु इतरे कथेगलु।
- नाटक: बेरळगे कोरळ, श्मशान कुरुक्षेत्र, महारात्री, यमन सोलु, चंद्रहास।
- आलोचना एवं विचारात्मक कृतियाँ: तपोनंदन, द्रौपदिय श्रीमुडि, रसौ वै सः, निरंकुश मतिगलिगे, विचार क्रांतिगे आह्वान।
- जीवनी एवं आत्मकथा: श्रीरामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, नेनपिन दोणियल्लि।

कुवेंपु का साहित्य केवल क्षेत्रीय न होकर सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों से जुड़ा हुआ है। इसी कारण उनके साहित्य का हिंदी सहित अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ, जिससे उनकी सांस्कृतिक दृष्टि व्यापक पाठक वर्ग तक पहुँची।

सम्मान और प्रतिष्ठा:

कुवेंपु को भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार, पद्म भूषण, कर्नाटक रत्न, राष्ट्रकवि की उपाधि तथा साहित्य अकादमी सहित अनेक प्रतिष्ठित पुरस्कार प्राप्त हुए। मैसूर, बेंगलुरु और कर्नाटक विश्वविद्यालयों द्वारा उन्हें मानद डॉक्टरेट की उपाधि से सम्मानित किया गया। वर्ष 1957 में धारवाड़ में आयोजित 39वें कन्नड़ साहित्य सम्मेलन के वे अध्यक्ष रहे।

अनुवाद में सांस्कृतिक रूपांतरण की अवधारणा:

कुवेंपु के उपन्यासों के हिंदी अनुवाद में अनेक ऐसे शब्द और पदबंध प्राप्त होते हैं, जो कन्नड़ समाज की लोक-आस्था, धार्मिक विश्वास, सामाजिक व्यवहार, प्रकृति-बोध और सांस्कृतिक परंपराओं से गहराई

से जुड़े हुए हैं। इन शब्दों का हिंदी में अनुवाद करते समय अनुवादक ने केवल भाषिक समानार्थक का सहारा न लेकर 'सांस्कृतिक समतुल्यता' (Cultural Equivalence) को आधार बनाया है। निम्नलिखित उदाहरण इस अनुवाद प्रक्रिया को स्पष्ट करते हैं—

1. 'ಹಚ್ಚೆ' — शारीरिक अलंकरण का सांस्कृतिक अनुवाद

- मूल: ಹಚ್ಚೆ (कानूरु सुब्बम्म हेग्गडति, पृ. 25)
- अनुवाद: गोदना (कानूरु हेग्गडिति, पृ. 34)
- सांस्कृतिक संदर्भ: यद्यपि आधुनिक समय में गोदने की मशीनें उपलब्ध हैं, तथापि ग्रामीण समाज में आज भी पारंपरिक रूप से हाथ से गोदना करने की प्रथा प्रचलित है।
- सांस्कृतिक मूल्यांकन: 'ಹಚ್ಚೆ' कन्नड़ ग्रामीण संस्कृति में शरीर पर स्थायी चिह्न अंकित करने की एक पारंपरिक प्रथा का द्योतक है, जो सौंदर्य-बोध, सामाजिक पहचान और लोकविश्वास से जुड़ी हुई है। हिंदी भाषी समाज में इस सांस्कृतिक व्यवहार का समतुल्य रूप 'गोदना' है। अनुवादक ने यहाँ शब्दानुवाद न करते हुए लक्ष्य भाषा में प्रचलित सांस्कृतिक समतुल्य शब्द का चयन किया है। यह अनुवाद केवल अर्थ का नहीं, बल्कि ग्रामीण जीवन की सांस्कृतिक परंपरा का भी रूपांतरण करता है। अतः यह अनुवाद भावात्मक और सांस्कृतिक—दोनों स्तरों पर सफल माना जा सकता है।

2. 'ನಾಮ ಇಟ್ಟುಕೊಲ್ಲುವುದು' — धार्मिक आचरण का सांस्कृतिक अनुवाद

- मूल: ನಾಮ ಇಟ್ಟುಕೊಲ್ಲುವುದು (मलेगलल्लि मदुमगलु, पृ. 202)
- अनुवाद: तिलक लगाना (पहाड़ी कन्या, पृ. 143)
- सांस्कृतिक मूल्यांकन: कन्नड़ समाज में 'नाम इट्टुकोल्लुवुदु' धार्मिक आस्था, सांस्कृतिक पहचान और अनुशासन का प्रतीक है। यह केवल शारीरिक क्रिया नहीं, बल्कि एक धार्मिक संस्कार है। हिंदी समाज में इस आचरण का सांस्कृतिक समतुल्य 'तिलक लगाना' है। अनुवादक ने यहाँ शब्दानुवाद के स्थान पर लक्ष्य भाषा की धार्मिक-सांस्कृतिक परंपरा के अनुरूप प्रचलित शब्द का चयन किया है। इससे मूल शब्द का धार्मिक भाव और सांस्कृतिक आशय सुरक्षित रहता है। अतः यह अनुवाद सांस्कृतिक दृष्टि से पूर्णतः सफल और प्रभावी है।

3. 'ತುಲಸೀಕಟ್ಟೆ' — धार्मिक-सांस्कृतिक प्रतीक का रूपांतरण

- मूल: तुलसीकट्टे (मलेगललि मदुमगलु, पृ. 152)
- अनुवाद: वृंदावन (पहाड़ी कन्या, पृ. 107)
- सांस्कृतिक मूल्यांकन: 'तुलसीकट्टे' कन्नड़ समाज में धार्मिक आस्था, पवित्रता और घरेलू पूजा-परंपरा का प्रतीक है। यह केवल एक स्थापत्य संरचना नहीं, बल्कि आचार-विचार और विश्वास से जुड़ा सांस्कृतिक चिह्न है। हिंदी समाज में इसी प्रकार की धार्मिक-सांस्कृतिक अवधारणा 'वृंदावन' के रूप में प्रचलित है। अनुवादक द्वारा समतुल्य प्रतीक का चयन मूल पाठ के धार्मिक भाव और सांस्कृतिक अर्थ को सुरक्षित रखता है। अतः यह उदाहरण सांस्कृतिक समतुल्यता पर आधारित सफल अनुवाद का उत्कृष्ट नमूना है।

4. 'भूतद वन' — लोकविश्वास का सांस्कृतिक अनुवाद

- मूल: भूतद वन (मलेगललि मदुमगलु, पृ. 134)
- अनुवाद: भूत वन (पहाड़ी कन्या, पृ. 96)
- सांस्कृतिक मूल्यांकन: 'भूतद वन' कन्नड़ संस्कृति में लोकविश्वास से जुड़ा शब्द है। यह केवल एक वन-क्षेत्र नहीं, बल्कि भय, अंधविश्वास और सामाजिक चेतना का प्रतीक है। अनुवादक ने 'भूत वन' शब्द का प्रयोग कर मूल शब्द की संरचना को यथावत् बनाए रखा है। हिंदी के पर्वतीय और ग्रामीण क्षेत्रों में भी 'भूतस्थल' जैसी मान्यताएँ पाई जाती हैं। इस प्रकार यह अनुवाद शब्दानुवाद के साथ-साथ सांस्कृतिक अर्थ का संरक्षण करता है और एक सटीक सांस्कृतिक अनुवाद सिद्ध होता है।

5. खाद्य-संस्कृति का सांस्कृतिक अनुवाद

- मूल: होलिगे (कानूरु सुब्बम्म हेग्गडति, पृ. 31)
- अनुवाद: पुरणपोली (कानूरु हेग्गडिति, पृ. 38)
- सांस्कृतिक मूल्यांकन: 'होलिगे' कन्नड़ संस्कृति का एक पारंपरिक और उत्सवपरक व्यंजन है, जिसका हिंदी में कोई सटीक समानार्थक उपलब्ध नहीं है। अनुवादक ने इसके लिए 'पुरणपोली' शब्द का प्रयोग किया है, जो मराठी संस्कृति में समान सामाजिक और सांस्कृतिक महत्व रखता है। यह अनुवाद शब्दानुवाद न होकर सांस्कृतिक समतुल्यता पर आधारित है, जिससे हिंदी पाठक को उस व्यंजन की सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति का स्पष्ट बोध होता है। अतः यह एक

सफल सांस्कृतिक अनुवाद है।

6. अर्थानुवाद और सांस्कृतिक सीमा

- मूल: होंबाळे (कानूरु सुब्बम्म हेग्गडति, पृ. 31)
- अनुवाद: सुवर्ण कदली (कानूरु हेग्गडिति, पृ. 40)
- सांस्कृतिक मूल्यांकन: 'होंबाळे' कन्नड़ भाषा का एक विशिष्ट शब्द है, जिसका हिंदी में कोई प्रत्यक्ष सांस्कृतिक समतुल्य उपलब्ध नहीं है। 'सुवर्ण कदली' से अर्थ स्पष्ट होता है, किंतु यह शब्द हिंदी की सांस्कृतिक परंपरा में प्रचलित नहीं है। अतः यह अनुवाद अर्थानुवाद के स्तर पर स्वीकार्य है, पर इसे पूर्ण सांस्कृतिक अनुवाद नहीं कहा जा सकता। यह उदाहरण सांस्कृतिक अनुवाद की सीमाओं को स्पष्ट करता है।

7. लोकविश्वास का सांस्कृतिक रूपांतरण

- मूल: तायित (कानूरु सुब्बम्म हेग्गडति, पृ. 67)
- अनुवाद: ताबीज (कानूरु हेग्गडिति, पृ. 88)
- सांस्कृतिक मूल्यांकन: 'ताइति' कन्नड़ समाज में लोकविश्वास, आस्था और धार्मिक संरक्षण से जुड़ा शब्द है। हिंदी समाज में इसी प्रकार की सांस्कृतिक अवधारणा 'ताबीज' के माध्यम से अभिव्यक्त होती है। अनुवादक द्वारा लक्ष्य भाषा के अनुरूप समतुल्य शब्द का चयन इस अनुवाद को सांस्कृतिक दृष्टि से पूर्णतः सफल बनाता है।

8. सामाजिक व्यवहार का सांस्कृतिक अनुवाद

- मूल: हेंड (कानूरु सुब्बम्म हेग्गडति, पृ. 113)
- अनुवाद: शराब (कानूरु हेग्गडिति, पृ. 178)
- सांस्कृतिक मूल्यांकन: यह अनुवाद केवल शब्दानुवाद नहीं, बल्कि सामाजिक व्यवहार और जीवन-शैली का भी संप्रेषण करता है। 'हेंड' और 'शराब' दोनों शब्द अपने-अपने समाज में समान सामाजिक संदर्भों और व्यवहारों से जुड़े हुए हैं। अतः यह अनुवाद सांस्कृतिक दृष्टि से सटीक और स्वीकार्य माना जा सकता है।

उपसंहार:

उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि कुवेंपु के उपन्यासों के हिंदी अनुवाद केवल भाषिक रूपांतरण तक सीमित नहीं

हैं, बल्कि वे एक गहन सांस्कृतिक संवाद का स्वरूप ग्रहण करते हैं। कन्नड़ समाज की लोक-आस्था, धार्मिक विश्वास, सामाजिक व्यवहार, प्रकृति-बोध और जीवन-दृष्टि को हिंदी भाषा में संप्रेषित करने हेतु अनुवादक ने शब्दानुवाद के स्थान पर सांस्कृतिक समतुल्यता को प्रमुख आधार बनाया है। इससे मूल कृति की आत्मा और भावात्मक संरचना सुरक्षित रह पाई है।

'हच्चे'–'गोदना', 'नाम इट्टुकोल्लुवुदु'–'तिलक लगाना', 'तुलसीकट्टे'–'वृंदावन' तथा 'ताइति'–'ताबीज' जैसे उदाहरण यह सिद्ध करते हैं कि जब लक्ष्य भाषा में समान सांस्कृतिक प्रतीक उपलब्ध होते हैं, तब अनुवाद अधिक प्रभावशाली, स्वाभाविक और संप्रेषणीय बन जाता है। वहीं 'होंबाळे' जैसे शब्द यह भी स्पष्ट करते हैं कि हर सांस्कृतिक तत्व का पूर्ण समतुल्य दूसरी भाषा में संभव नहीं होता; ऐसी स्थिति में अनुवादक अर्थानुवाद का सहारा लेकर पाठक को मूल अर्थ से परिचित कराता है। इससे सांस्कृतिक अनुवाद की सीमाएँ और चुनौतियाँ भी उजागर होती हैं।

कुवेंपु का साहित्य मानवतावाद और सांस्कृतिक चेतना से ओतप्रोत है, और उनके उपन्यासों के हिंदी अनुवाद इस चेतना को व्यापक भारतीय संदर्भ में स्थापित करते हैं। इस प्रकार ये अनुवाद न केवल भाषाओं के बीच सेतु का कार्य करते हैं, बल्कि भारतीय भाषाओं और संस्कृतियों के पारस्परिक संबंधों को भी सुदृढ़ करते हैं। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कुवेंपु के उपन्यासों के हिंदी अनुवाद सांस्कृतिक समतुल्यता पर आधारित सफल प्रयास हैं, जो भारतीय बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक साहित्यिक परंपरा को समृद्ध और सशक्त बनाते हैं।

Funding:

This study was not funded by any grant.

Conflict of interest:

The Authors have no conflict of interest to declare that they are relevant to the content of this article.

About the License:

© The Authors 2024. The text of this article is open access and licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.